ये कोरोना के कोरे किस्से नहीं, इंसानियत की सच्ची कहानियाँ हैं ?

ये कुछ ऐसी कहानियां हैं जिनका कि रेकार्ड और याददाश्त दोनों ही में बने रहना ज़रूरी है।कोरोना को एक-न-एक दिन ख़त्म होना ही है, ज़िंदा तो अंतत: इसी तरह की लाखों-करोड़ों कहानियां ही रहने वाली हैं।ये तो केवल वे कहानियाँ हैं जो नज़रों में पड़ गईं ,वे अभी उजागर होना बाक़ी हैं जो महामारी की समाप्ति के बाद आंसुओं से लिखी जाएँगी। एक-एक शख़्स के पास ही ऐसी कई कहानियाँ कहने को होंगी।प्रस्तुत कहानियाँ न सिर्फ़ सच्ची हैं ,देश के प्रतिष्ठित अख़बारों में प्रकाशित भी हो चुकी हैं।हम चाहें तो इन्हें और इन जैसी दूसरी कहानियों को स्मृतियों में संजो कर रख सकते हैं ,आगे कभी आ सकने वाले ऐसे ही तकलीफ़ भरे दिनों में एक-दूसरे से बाँटने के लिए।

पहली कहानी कोलकाता की है।स्नेहल सेनगुप्ता ने 'द टेलीग्राफ़' अख़बार के लिए लिखी है।लॉक डाउन के दौरान एक पुलिस पार्टी दमदम हवाई अड्डे के पीछे की तरफ़ बने मकानों के पास से गुज़र रही थी तभी एक बयासी साल के बुजुर्ग ने उसकी ओर हाथ हिलाया।पुलिस पार्टी को लगा बुजुर्ग को शायद किसी मदद की ज़रूरत है।पुलिस पार्टी को बुजुर्ग ने अपना परिचय दीनबंधु महाविद्यालय से सेवा-निवृत अध्यापक सुभाष चंद्र बनर्जी के रूप में दिया और बताया वे अकेले हैं और पेन्शन के सहारे जीवन व्यतीत करते हैं।उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि उन्हें पुलिस से किसी भी मदद की ज़रूरत नहीं है।वे तो कोरोना के ख़िलाफ़ लड़ाई में अपना योगदान भी देना चाहते हैं। उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि वे यह काम कैसे कर सकते हैं।पुलिस पार्टी दिखी तो लगा कि मदद करने का रास्ता मिल गया।बनर्जी ने दस हज़ार का चेक मुख्यमंत्री राहत कोष के लिए पुलिस पार्टी को सौंप दिया।उन्होंने यह भी कहा कि वे मदद तो ज़्यादा की करना चाहते थे पर पेन्शन की रक़म का काफ़ी हिस्सा दवाएँ आदि ख़रीदने में ही खर्च हो जाता है।

दूसरी कहानी पूर्वी दिल्ली के मंडावली इलाक़े में किराए के छोटे से मकान में आठ लोगों के परिवार की ज़िम्मेदारी निभाने वाले ऑटो रिक्शा चालक एम एस अंसारी की है जो इंडियन एक्सप्रेस के लिए सौम्या लखानी ने प्रस्तुत की है।17 अप्रैल को अंसारी को अचानक लगा कि उसके पास तो अब एक ब्रेड ख़रीदने के पैसे भी नहीं बचे हैं।परिवार का क्या होगा ?अगले दिन समाचार एजेन्सी ए एन आई द्वारा एक चित्र जारी हो गया जिसमें अंसारी का मास्क लगा चेहरा आंसुओं से भीगा हुआ दिखाया गया था।बस क्या था !साठ हज़ार की राशि और बारह दिन का राशन अंसारी के घर तुरंत ही लोगों ने पहुँचा दिया।लॉक डाउन के पहले अंसारी 17-18 हज़ार महीने का कमा लेते थे। उसी से परिवार चलता था और

रिक्शे की किश्त और मकान भाड़ा दिया जाता था।अंसारी के पास शब्द नहीं हैं कि मदद के लिए कैसे आभार व्यक्त करें !

तीसरी कथा बिहार में नालंदा ज़िले की एक अदालत की है जिसमें मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के गृह ज़िले के ही एक गाँव का सोलह-वर्षीय किशोर 17 अप्रैल को न्यायिक दंडाधिकारी मानवेन्द्र मिश्रा को बता रहा था कि उसे बटुए की चोरी किस मजबूरी के चलते करना पड़ी थी।किशोर ने बताया कि वह अपनी माँ और छोटे भाई को भूख से मरते हुए देख नहीं पा रहा था।अदालत में उपस्थित लोग जब समझ ही नहीं पा रहे थे कि आगे क्या होने वाला है,श्री मिश्रा ने फ़ैसला सुनाया कि किशोर अपने घर जाने के लिए स्वतंत्र है।श्री मिश्रा ने यह भी कहा कि उनके अपने पैसों से किशोर के लिए अनाज, सब्ज़ी और कपड़ों की व्यवस्था की जाए।'द टेलीग्राफ़' अख़बार के देवराज की कहानी का अंत यह है कि अदालत में उपस्थित लोगों की आँखें नम थीं और जो पुलिस किशोर को अदालत लाई थी वही उसे उसके गांव तक छोड़ने जा रही थी।

और अंतिम कहानी डॉक्टर उमा मधुसूदन को लेकर है।उमा ने अपनी मेडिकल की पढ़ाई मैसूर (कर्नाटक)के एक मेडिकल कॉलेज से पूरी की थी।वे इस समय अमेरिका के साउथ विंडसर हॉस्पिटल (कनेक्टिकट स्टेट) में कार्य करते हुए कोरोना के मरीज़ों के इलाज में जी-जान से लगी हुई हैं।उमा ने अपने आप को इस कदर झोंक दिया है कि लोग उसकी सेवा से भाव-विव्हल हैं।सोशल मीडिया पर वायरल हो रहे एक वीडियो में उमा अपने घर के बाहर खड़ी हुई हैं और कतारबद्ध सैंकड़ों कारें उनके सामने रुकती हुई गुज़र रही हैं।उमा, कारों में बैठे लोगों का अत्यंत विनम्रतापूर्वक अभिवादन स्वीकार कर रही हैं।क्या हम भी अपने यहाँ लॉक डाउन के ख़त्म होने की प्रतीक्षा नहीं कर रहे हैं जिससे कि अपने चिकित्सकों और स्वास्थ्य कर्मियों के प्रति इसी तरह से आभार व्यक्त कर सकें ? या उन्हें संकट ख़त्म होने के साथ ही भूल जाएँगे ?

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवँ राजनीतिक विश्लेषक हैं)